नारी शक्ति और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन

Avinash Kumar
Assistant Professor & Head
Department of History
Patna College, Patna-800005
Mobile No. 6202393206
E-mail Id: avinashisavailable@gmail.com

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की प्रकृति मूलतः पुरुष प्रधान थी और संभवतः यही कारण है कि राष्ट्रीय आंदोलन पर लिखी गई तमाम पुस्तकों, लेखों आदि में महिलाओं की सहभागिता और उनके योगदान को यथोचित स्थान नही मिल सका है। वास्तव में तत्कालीन पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं की दुनिया घर की चहारदीवारी के भीतर सीमित थी और उसे पुरुष की अनुगामिनी ही माना जाता था। फिर भी, राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास तमाम ऐसी महिलाओं के साहस, त्याग व बलिदान से भरा पड़ा है, जिन्होंने अपनी पारिवारिक भूमिका के साथ-साथ राष्ट्रवादी गतिविधियों में हिस्सेदारी की।तमाम महिलाओं ने अपनी वीरता, साहस और नेतृत्व-क्षमता का परिचय देते हुए भारत की स्वतंत्रता के लिए पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष किया। गांधीजी ने भी स्वीकार किया था कि हमारी माँ-बहनों के योगदान के बिना यह स्वतंत्रता का संघर्ष संभव नही था।

समाज-सुधार आंदोलन और महिला-उद्धार

भारत में ब्रिटिश सरकार और ईसाई मिशनरियों ने अपने साम्राज्यीय हितों की पूर्ति के निमित्त परंपरागत भारतीय समाज-व्यवस्था में सुधार व आधुनिकता को प्रोत्साहन देना आरंभ किया था। किंतु 19वी शताब्दी में अनेक समाज-सुधारकों और संगठनों ने भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने और महिलाओं की दशा को सुधारने के लिए शक्तिशाली आंदोलन चलाये। बुद्धिवादी और मानवतावादी विचारों से प्रभावित होकर अनेक समाज-सुधारकों, जैसे- राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले, गोपाल हरिदेशमुख, जस्टिस रानाडे, के.टी. तेलंग, बी.एम. मालाबारी, डी.के. कर्वे, वीरेशलिंगम् व अनेक संगठनों ने भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने और महिलाओं की दशा को सुधारने के लिए शक्तिशाली आंदोलन चलाये।

राममोहन राय से लेकर वीरेशलिंगम् जैसे सुधारकों ने सतीप्रथा, बालविवाह, बहुविवाह, कन्यावध, पर्दाप्रथा व देवदासी प्रथा जैसी कुरीतियों को समाप्त करने और विधवा-पुनर्विवाह, स्त्री-शिक्षा को प्रोत्साहन देने तथा मध्यमवर्गीय महिलाओं को व्यवसाय या सरकारी सेवा में जाने के योग्य बनाने के लिए कड़ा परिश्रम किये। राममोहन राय के प्रयास से लार्ड विलियम बैंटिक ने 1829 में बंगाल में सती प्रथा को समाप्त किया, तो ईश्वरचंद्र विद्यासागर व डी.के. कर्वे के प्रयासों से 1856 में 'हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम' द्वारा विधवा विवाह को मान्यता मिली। सुधारकों के प्रयास से 1891 में लड़कियों के विवाह की आयु 10 वर्ष से बढ़ाकर 12 वर्ष की गई और विभिन्न कानूनों द्वारा कन्या वध पर भी प्रतिबंध लगाया गया। इसी प्रकार बी.एम. मालाबारी और ज्योतिबा फुले जैसे सुधारकों ने महिलाओं की स्थिति को सुधारने, बाल विवाह पर रोक लगाने तथा महिलाओं में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए अनेक सकारात्मक कदम उठाये। महिला-सुधार के प्रयत्नों से न केवल महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ, बल्कि उनमें स्वयं भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता आई।

1857 का विद्रोह में महिलाओं की भूमिका

1857 के महान् विद्रोह, जिसे भारत का प्रथम स्वतंत्राता संग्राम माना जाता है, ने भारत में अंग्रेजी राज की जड़ों को हिला दिया था। भारतीय स्वतंत्रता के इस महान् संग्राम में दो वीरांगनाओं का नाम प्रमुखता से लिया जाता है- एक तो लखनऊ की बेगम हजरत महल और दूसरे झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई। इनके पूर्व 1824 में कित्तूर (कर्नाटक) की **रानी चेनम्मा** ने अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध 'फिरंगियों भारत छोड़ो' का बिगुल बजाया था।

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई

जब 1855 में झाँसी के राजा गंगाधर राव की मौत के बाद अंग्रेजों ने लक्ष्मीबाई और उनके दत्तक पुत्र को शासक मानने से इनकार कर दिया, तो रानी ने अंग्रेजों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया। रानी लक्ष्मीबाई का स्पष्ट नारा था कि "मैं अपनी झाँसी नही दूँगी" और अंततः इसी प्रयास में रानी 8 जून, 1858 को अंग्रेजी सेना से लड़ते हुए मारी गई। जनरल ह्यूरोज के अनुसार रानी **'विद्रोहियों में एकमात्र मर्द थी।'**

वीरांगना झलकारीबाई

रानी लक्ष्मीबाई ने झलकारीबाई के नेतृत्व में महिलाओं की एक अलग टुकड़ी '**दुर्गा दल**' का गठन किया था। झलकारी का उल्लेख मराठा पुरोहित विष्णुराव गोडसे की कृति '**माझा प्रवास**' में मिलता है। झलकारीबाई के दुर्गा दल में मोतीबाई, काशीबाई, जूही और दुर्गाबाई जैसी अनेक महिला सैनिकें थी, जो अंग्रेजों से जूझते हुए वीरगति को प्राप्त हुई थी।

बेगम हजरत महल

लखनऊ में 1857 की क्रांति का नेतृत्व बेगम हजरत महल ने किया। बेगम हजरत महल ने अपने नाबालिग पुत्र बिरजिस कादिर को गद्दी पर बिठाकर अंग्रेजी सेना का स्वयं मुकाबला किया।

वीरांगना रहीमी, ऊदादेवी और आशादेवी

बेगम हजरत महल के सैनिक दल में तमाम महिलाएं शामिल थी, जिसका नेतृत्व रहीमी करती थी। लखनऊ में सिकंदरबाग किले पर हमले में वीरांगना ऊदादेवी ने अकेले ही अंग्रेजों से मुकाबला करते हुए लगभग 32 अंग्रेज सैनिकों को मार गिराया था। अंत में वीरांगना ऊदादेवी कैप्टन वेल्स की गोली का शिकार हो गई। वीरांगना ऊदादेवी का जिक्र अमृतलाल नागर ने अपनी कृति '**गदर के फू**ल में किया है। इसी प्रकार एक वीरांगना आशादेवी 8 मई, 1857 को अंग्रेजी सेना का मुकाबला करते हुए शहीद हुई थी। आशादेवी का साथ देनेवाली वीरांगनाओं में रनवीरी वाल्मीकि, शोभादेवी, महावीरीदेवी, सहेजा वाल्मीकि, नामकौर, राजकौर, हबीबा गुर्जरीदेवी, भगवानीदेवी, भगवतीदेवी, इंदर कौर, कुशलदेवी आदि थी। इन वीरांगनाओं ने मरते दम तक अंग्रेजी सेना का मुकाबला किया। लखनऊ की एक नर्तकी हैदरीबाई भी रहीमी के सैनिक दल में शामिल हुई थी।

बेगम हजरत महल के बाद अवध के मुक्ति-संग्राम में तुलसीपुर के राजा दृगनाथ सिंह की रानी ईश्वरकुमारी ने होपग्राण्ट के सैनिक दस्तों से जमकर लोहा लिया। यही नही, अवध की **बेगम आलिया ने** भी अपने अद्भुत कारनामों से अंग्रेजी हुकूमत को कड़ी चुनौती दी थी। कानपुर की नर्तकी अजीजन बेगम के हृदय में भी देशभक्ति की भावनाएं हिलोरें मार रही थी।
अजीजन जानती थी कि शक्तिशाली अंग्रेजों को पराजित करना आसान नही है, फिर भी उसने देश की आजादी के लिए नर्तकी के जीवन का परित्याग कर क्रांतिकारियों की सहायता की। नर्तकी अजीजन बेगम ने '**मस्तानी टोली**' के नाम से 400 महिलाओं की एक टोली बनाई, जो मर्दाना भेष में घायल सिपाहियों की मरहम पट्टी करती और उनकी सेवा-सुश्रुशा करती थी। अंग्रेजों ने जब कानपुर पर अधिकार कर लिया, तो अजीजन बेगम भी पकड़ी गई और गोली मारकर उसकी हत्या कर दी गई।

पेशवा बाजीराव की फौज के साथ बिठूर आनेवाली मस्तानीबाई ने भी कानपुर के स्वाधीनता संग्राम में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। मुजफ्फरनगर के मुंडभर की **महावीरी देवी** ने 1857 के संग्राम में 22 महिलाओं के साथ मिलकर अंग्रेजों पर हमला किया था। अनूप शहर की **चौहान रानी ने भी** अंग्रेजी सत्ता को सशस्त्र चुनौती दी थी और अनूप शहर के थाने पर लगे यूनियन जैक को उतारकर हरा राष्ट्रीय झंडा फहराया था। वस्तुतः इतिहास के पन्नों में ऐसी अनगिनत कहानियां दर्ज हैं, जहाँ वीरांगनाओं ने अपने साहस और वीरता के बल पर अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये। मध्य प्रदेश में रामगढ़ रियासत (मांडला जिले में) की रानी **अवंतीबाई लोधी** ने 1857 के संग्राम के दौरान पूरी शक्ति के साथ अंग्रेजों का विरोध किया। रानी ने सैनिकों और सरदारों का उत्साह बढ़ाते हुए कहा था, 'भाइयों! जब भारत माँ गुलामी की जजीरों से बँधी हो, तब हमें सुख से जीने का कोई हक नही, माँ को मुक्त करवाने के लिए ऐशो-आराम को तिलांजलि देनी होगी, खून देकर ही आप अपने देश को आजाद करा सकते हैं।' **रानी अवंतीबाई लोधी** ने अपने सैनिकों के साथ अंग्रेजों से जमकर लोहा लिया और अंततः आत्म-समर्पण करने की बजाय स्वयं को

खत्म कर लिया। 1857 की क्रांति में अंग्रेजों का प्रबल प्रतिरोध करने के लिए धार क्षेत्र में रानी द्रौपदी बाई ने अपनी सेना में अरब, अफगान आदि सभी वर्ग के लोगों को नियुक्त किया।

रानी द्रौपदी बाई ने गुलखान, बादशाह खान, सआदत खान जैसे क्रांतिकारी नेताओं से समझौता किया। जब 22 अक्टूबर, 1857 को ब्रिटिश सैनिकों ने धार के किले को घेर लिया, तो क्रांतिकारियों और ब्रिटिश सैनिकों के बीच 24 से 30 अक्टूबर तक कड़ा संघर्ष चला। यद्यपि अंग्रेज किले को ध्वस्त करने में सफल हो गये, किंतु रानी द्रौपदीबाई अपने त्याग और बलिदान के कारण क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणाप्रद बन गईं। इसी तरह जैतपुर, तेजपुर और हिंडोरिया की रानियों ने भी अंग्रेजी सेना से मोर्चा लिया। इस प्रकार 1857 में भारतीय महिलाओं ने अपने त्याग, वीरता और बलिदान के द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि महिलाएं किसी भी रूप में पुरुषों से कमतर या कमजोर नही हैं। किंतु 1857 के विप्लव में भाग लेनेवाली अधिकांश महिलाएं प्रायः राजपरिवार या अभिजन वर्ग से संबंधित थी। यद्यपि इनमें से अधिकांश ने अपने व्यक्तिगत हितों पर आँच आने पर ही अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध संघर्ष किया था, फिर भी इससे महिलाओं के वीरत्व पर संदेह नही किया जाना चाहिए।

भारतीय राष्ट्रवाद में महिलाओं की भूमिका

1857 के बाद भारत की धरती पर हो रहे परिवर्तनों ने जहाँ एक ओर राष्ट्रीय नवजागरण की पृष्ठभूमि तैयार की, वही दूसरी ओर पाश्चात्य शिक्षा, आधुनिक मूल्यों और वैज्ञानिक ज्ञान की रोशनी में रूढ़िवादी समाज के अनेक मूल्य टूट रहे थे। ब्रिटिश नीतियों और सुधार आंदोलनों के कारण अब हिंदू समाज के बंधन ढीले पड़ने लगे थे और स्त्रियों की दुनिया चूल्हा-चैके से बाहर निकल कर एक नये क्षितिज में विस्तार पाने लगी थी। यद्यपि वैचारिक स्तर पर राष्ट्रवाद पुरुषत्व पर आधारित था, किंतु राष्ट्रीय आंदोलन को जनता से जोड़ने के लिए राष्ट्रवादियों ने '**मातृत्व**' की अवधारणा को राष्ट्रीय भावना से जोडकऱ भारत को '**मातृभूमि**' के रूप में प्रस्तुत किया।राष्ट्रीय आंदोलन के इस चरण में महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में भाग लेने के लिए प्रेरित तो किया गया, किंतु उन्हें घरेलू क्षेत्र की सीमा में रहने की हिदायत भी दी गई थी।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में महिलाओं की भूमिका

19वी शताब्दी के अंतिम चरण में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ ही स्त्रियों की भूमिका में कुछ परिवर्तन हुआ। इस दौर में महिलाओं ने अपनी घरेलू भूमिका का निवर्हन करते हुए आंदोलन में भागीदारी की। यद्यपि पितृसत्ता को लचीला बना दिया गया था, किंतु अभी भी महिलाएं उसकी परिधि से पूरी तरह बाहर नही निकल पाई थी। अब भी महिलाएं पुरुषों के निर्देशानुसार ही कार्य कर रही थी और उनकी राजनीतिक भागीदारी पुरुषों की स्वीकृति पर ही निर्भर थी। 1890 में भारतीय महिला **उपन्यासकार स्वर्णकुमारी घोषाल** तथा ब्रिटिश साम्राज्य की **पहली महिला स्नातक कादंबरी** गांगुली भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में प्रतिनिधि के तौर पर शामिल हुई थी। इससे लगता है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशनों में महिलाएं पुरुषों की ही भाँति भाग लेने लगी थी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में महिलाओं की यह सहभागिता प्रायः प्रतीकात्मक ही होती थी, क्योंकि सभी निर्णयों पर राष्ट्रवादी अभिजन पुरुष वर्ग का ही एकाधिकार था।

सावित्रीबाई फुले और पंडिता रमाबाई जैसी कुछेक महिलाएं भी थी, जिन्होंने खुलकर औपनिवेशिक पितृसत्तात्मकता पर प्रहार किया। पं. रमाबाई ने तो ब्राह्मण महिला होकर भी न केवल शूद्र पुरुष से विवाह किया, बल्कि विधवा होने के बावजूद सार्वजनिक जीवन में बनी रही और चुनाव में उम्मीदवार बनने जैसा राजनीतिक कार्य भी किया।

बंग-भंग-विरोधी आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

भारतीय स्त्रियों की जागृति तथा मुक्ति में सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भागीदारी का रहा। बीसवी सदी में राष्ट्रीय आंदोलन के विकास के साथ महिला-उद्धार आंदोलन को पर्याप्त बल मिला और राष्ट्रीय आंदोलन में अनेक महिलाओं ने सक्रिय भूमिका भी निभाई। 1905-06 के बंगाल-विभाजन विरोधी आंदोलन में बड़ी संख्या में महिलाओं ने सार्वजनिक रूप से भाग लिया। इस चरण में पत्र-पत्रिकाओं, विशेषकर सभाओं व महिला संगठनों के माध्यम से अनेक महिलाओं

को आंदोलन में सहभागिता हेतु प्रेरित किया गया। इस समय का गाया जानेवाला गीत **'वंदेमातरम्'** बाद में संपूर्ण स्वतंत्रता आंदोलन का राष्ट्रीय गीत बन गया।

भाई-बहन के पवित्र त्यौहार रक्षाबंधन को बंग-भंग विरोधी आंदोलन में एक अनूठे रूप में प्रयोग किया गया, जिसमें बंगाली हिंदू व बंगाली मुस्लिमों ने एक दूसरे के हाथों में राखियां बाँधी। स्वदेशी और बहिष्कार के इस आंदोलन में शहरी मध्यवर्ग की सदियों से घरों में कैद महिलाएं जुलूसों और धरनों में शामिल हुई। ब्रिटिश शासन का विरोध करने के लिए महिलाओं ने विदेशी सामानों का बहिष्कार किया, जिसे **'पिकेटिंग'** कहा जाता था। ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार के क्रम में महिलाओं ने अपनी काँच की चूडियां तोड डाली और प्रतिरोध के अनुष्ठान के रूप में रसोई-बंदी दिवस मनाया। इन गतिविधियों के अलावा महिलाओं ने **'स्वदेशी मेला'** लगाना शुरू किया।

सरलादेवी चौधरानी, जिन्हें ब्रिटिश राज के लिए अपने पति से ज्यादा खतरनाक माना जाता था, ने **'लक्ष्मी भंडार'** खोला। स्वामी श्रद्धानंद की पुत्री वेदकुमारी और आज्ञावती ने महिलाओं को संगठितकर विदेशी कपड़ों की होली जलाई। कालांतर में वेदकुमारी की पुत्री सत्यवती ने 1928 में साइमन कमीशन के दिल्ली आगमन पर काले झंडे दिखाये और सविनय अवज्ञा आंदोलन बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इस प्रकार बंगाल-विभाजन विरोधी आंदोलनों में महिलाओं की सहभागिता से स्पष्ट है कि पारिवारिक दायरे में रहते हुए व्यक्तिगत स्तर पर महिलाएं आंदोलन में भागीदार बनने लगी थी। जब भूपेंद्रनाथ दत्त को राजद्रोही लेख लिखने के कारण सजा हुई, तो लगभग 500 महिलाओं ने उनके घर जाकर उनकी माँ भुवनेश्वरी देवी को बधाई दी तथा ढाढ़स बंधाया था। स्वदेशी आंदोलन के बाद स्त्रियों की राजनीतिक गतिविधियों में काफी वृद्धि हुई।

1917 में कांग्रेस अधिवेशन के पहले दिन कांग्रेस अध्यक्ष एनी बेसेंट अलावा दो अन्य महिलाएं कांग्रेस के मंच और कार्यवाही में शामिल हुई, जिनमें एक सरोजिनी नायडू और दूसरी अली बंधुओं की माँ बी अम्मा थी। अपने इसी अधिवेशन में कांग्रेस ने महिलाओं के लिए शिक्षा और निर्वाचित संस्थाओं में प्रतिनिधित्व की माँग की थी। अगले वर्ष 1918 में सरोजिनी नायडू ने कांग्रेस अधिवेशन में स्त्री-पुरुषों के लिए मताधिकार की समान योग्यता की माँग हेतु एक प्रस्ताव रखा। विभिन्न महिला संघों, कांग्रेस व महिला प्रदर्शनकारियों की माँग के कारण ही 1919 के भारत सरकार अधिनियम में महिलाओं को सीमित मताधिकार प्राप्त हुआ। 1919 के बाद स्त्रियां राजनीतिक जुलूसों में चलने लगी, विदेशी वस्त्रों और शराबों की दुकानों पर घरना देने लगी और खादी बुनने तथा उसके प्रचार का कार्य करने लगी।

गांधीवादी आंदोलनों में महिलाओं की भूमिका

भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी के पदार्पण से राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी का नया चरण शुरू हुआ। दक्षिण अफ्रीका में ही अपने संघर्षो के दौरान गांधीजी को महिलाओं की शक्ति का अनुभव हो चुका था। गांधीजी जानते थे कि राष्ट्रीय आंदोलन को सच्चे अर्थो में जनांदोलन बनाने के लिए उसमें महिलाओं की व्यापक भागीदारी बहुत आवश्यक है। गांधीजी ने आदर्श भारतीय नारी की अवधारणा प्रस्तुत किया और महिलाओं को राष्ट्र की सेवा में लग जाने और अपने देश के लिए बलिदान देने का आह्वान किया। गांधीजी ने स्त्री-पुरुष के बीच 'स्वाभाविक श्रम-विभाजन' पर जोर दिया और द्रोपदी, सीता और सावित्री को महिलाओं का आदर्श बताया। गांधीजी का कहना था कि द्रोपदी, सीता और सावित्री में जो गुण थे, वही स्वाधीनता संग्राम में हिस्सेदारी करनेवाली महिलाओं में भी होने चाहिए।

गांधीजी मानना था कि बराबरी का अर्थ यह नही हैं कि महिलाएं वह सब काम करें, जो पुरुष करते हैं। गांधीजी का कहना था कि अपने स्वभाव व क्षमतानुसार सभी को अलग-अलग कार्य करने चाहिए। गांधीजी का मानना था कि घर देखना महिलाओं का मूल कर्तव्य है, किंतु वे विदेशी कपड़ों और शराबों की दुकानों पर धरने देकर स्वदेशी और सत्याग्रह जैसे अहिंसक आंदोलनों में भागीदारी कर राष्ट्र की सेवा कर सकती हैं। इस प्रकार गांधीजी ने महिलाओं को सुधार की वस्तु के रूप में नही, बल्कि एक जागरूक नागरिक और अपने भाग्य-निर्माता के रूप में देखा, जो स्वयं के साथ राष्ट्र का भी भाग्य बदल सकती हैं।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद 1919 में रौलट ऐक्ट का विरोध करने के लिए गांधीजी ने महिलाओं के लिए कार्यक्रम बनाया। 6 अप्रैल को सभी वर्गों व समुदायों की महिलाओं को संबोधित करते हुए गांधीजी ने रोलट कानून के विरोध में सत्याग्रह में शामिल होने को कहा। गांधीजी की उच्च नैतिक स्थिति के कारण जब महिलाएं घर से बाहर निकलकर राजनीतिक गतिविधियों में भाग ले रही थी, तो उनके परिवारवालों को विश्वास था कि वह सुरक्षित रहेंगी। इसी विश्वास के कारण गांधीजी द्वारा निर्देशित व संचालित प्रायः सभी आंदोलनों में महिलाओं की सहभागिता अपेक्षाकृत अधिक व्यापक रही। गांधीजी ने ब्रिटिश राज को 'रावणराज' की संज्ञा देते हुए कहा कि सीता ने कभी भी रावण के साथ सहयोग नही किया था, इसलिए भारतीय जनता को भी इस राक्षसी सरकार के साथ सहयोग नही करना चाहिए। रामराज्य केवल तभी आ सकता हैं, जब महिलाएं निष्ठावान्, साहसी सीता जैसी बनेंगी और पुरुषों के साथ एकीकृत रूप से आगे बढ़ते हुए इस अनैतिक शासन के खिलाफ लड़ेंगी।

असहयोग आंदोलन में महिलाओं की भूमिका

असहयोग आंदोलन की शुरुआत में महिलाओं के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण, किंतु सीमित भूमिका रखी गई थी जो मुख्यतः स्वदेशी व बहिष्कार के अभियान से संबंधित थी। गांधीजी ने महिलाओं को स्वदेशी अपनाने तथा चरखे के प्रयोग का संदेश दिया। चरखे से खादी बनाने में महिलाओं को आमदनी भी होने लगी, जिसके कारण पुरुष भी इस कार्य में उनको सहयोग देने लगे। गांधीजी ने भारतीय जनमानस को यह विश्वास दिलाया कि असहयोग आंदोलन की सफलता स्वदेशी अपनाने व विदेशी के बहिष्कार पर टिकी हैं, इसलिए आंदोलन की सफलता के लिए महिलाओं की समान सहभागिता आवश्यक है। गांधी के प्रयासों से असहयोग आंदोलन के दौरान देश के भिन्न-भिन्न भागों में महिलाओं ने प्रदर्शनों, जुलूसों और सभाओं में भाग लिया। अनेक महिलाओं ने खादी व चरखे जैसे रचनात्मक कार्यों को अपनाया और कुछेक ने सरकारी विद्यालयों का बहिष्कार किया। नवंबर, 1921 में महिलाओं ने अपने जोरदार विरोध-प्रदर्शन से प्रिंस आफ वेल्स का स्वागत किया।

इससे पहले अगस्त, 1921 में बंगाल के कांग्रेसी नेता चितरंजन दास की विधवा बहन ने महिलाओं के समूह को संबोधित करते हुए कहा था कि महिलाओं को अपने देश की सेवा करने के लिए अपने घरों को छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए। दिसंबर, 1921 में कलकत्ता में असहयोग आंदोलन के समर्थन में खुलेआम आक्रोश प्रदर्शन करते हुए चितरंजन दास की पत्नी बसंती डे, बहन उर्मिला देवी तथा भतीजी सुनीति डे जेल गईं। कलकत्ता में महिलाओं ने खादी बेंचकर, शराब की दुकानों पर धरना देकर अपनी गिरफ्तारियां दीं, असहयोग किया, कानून तोड़कर जेल गईं और पुलिस की लाठियां तक खाईं। गांधीजी जगह-जगह घूमकर महिलाओं को ब्रिटिश सरकार के अनुचित कानूनों का विरोध करने के लिए प्रेरित करते रहे। असहयोग आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लेनेवाली **कमलादेवी चट्टोपाध्याय** ने बर्लिन में अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व कर तिरंगा फहराया।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में मुस्लिम महिलाओं की भूमिका

हिंदू महिलाएं ही नही, मुस्लिम महिलाएं भी धीरे धीरे असहयोग आंदोलन से जुड़ रही थी। 1921 के दौर में अली बंधुओं की माँ बी अम्मा ने लाहौर से निकलकर अनेक महत्त्वपूर्ण नगरों का दौरा किया और हिंदू-मुस्लिम एकता का संदेश दिया। सितंबर, 1922 में बी अम्मा ने शिमला दौरे के समय वहाँ की फैशनपरस्त महिलाओं को खादी पहनने के लिए प्रेरित किया। बी अम्मा ने '**आल इंडियन लेडीज कांफ्रेंस**' में 6,000 महिलाओं को संबोधित करते हुए आह्वान किया था कि यदि पुरुष गिरफ्तार हो जायें, तो महिलाएं धरना-प्रदर्शन करें और झंडे को लहराती रहें। यद्यपि बी अम्मा ने अपनी पूरी जिंदगी पर्दे में गुजारी थी, लेकिन सभाओं में उन्होंने बुर्का उठाकर अपनी बात रखी। उस दौर में मुस्लिम महिलाओं के लिए यह बहुत बड़ी बात थी। हसरत मोहानी की बेगम ने भी मर्दाना वेश धारण कर स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लिया और तिलक के गरम दल में शामिल होने पर जेल गईं।

1917 में सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में महिला मताधिकार को लेकर वायसराय से मिलने गये प्रतिनिधिमंडल में हसरत मोहानी की बेगम भी शामिल थी। जैसे-जैसे असहयोग आंदोलन आगे बढ़ा, वैसे-वैसे महिलाओं की सक्रियता भी बढ़ती गई।

दुर्गाबाई देशमुख, कस्तूरबा गाँधी, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, सरोजिनी नायडू, नेहरू परिवार की उमा नेहरू और कमला नेहरू इस आंदोलन में सक्रिय रही। यद्यपि असहयोग आंदोलन में महिलाओं ने बढ-चढ़ कर भागेदारी की, किंतु ये महिलाएं अधिकतर अभिजन व मध्यवर्गीय पृष्ठभूमि से थी और व्यापक स्तर पर यह आंदोलन आम महिलाओं से नही जुड़ सका। फिर भी, यह आंदोलन उस स्त्री वर्ग के लिए काफी महत्त्वपूर्ण था, जिसे सदैव किसी तरह की पहल करने से वंचित रखा गया था।

सरोजिनी नायडू

1925 में कानपुर में हुए कांग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता 'भारत कोकिला' सरोजिनी नायडू ने की, जिन्हें कांग्रेस का प्रथम भारतीय महिला अध्यक्ष बनने का गौरव भी प्राप्त है। नायडू 1914 में पहली बार गांधीजी से इंग्लैंड में मिली थी और उनके विचारों से प्रभावित होकर देश के लिए समर्पित हो गईं थी। सरोजिनी नायडू ने खिलाफत और असहयोग आंदोलन में सक्रिय रूप से गाँव-गाँव घूमकर देशप्रेम का अलख जगाया था। अपनी लोकप्रियता और प्रतिभा के कारण 1932 में सरोजिनी नायडू ने दक्षिण अफ्रीका में भारत का प्रतिनिधित्व किया। देश की स्वतंत्राता के बाद सरोजिनी नायडू उत्तर प्रदेश की पहली महिला राज्यपाल भी बनी। स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं ने राष्ट्रवादियों को विविध प्रकार से प्रोत्साहन भी दिया। बारदोली सत्याग्रह के दौरान सरदार वल्लभभाई पटेल को '**सरदार**' की उपाधि वहाँ की महिलाओं ने ही दी थी। 1930 के सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान अरुणा आसफ अली जैसी महिलाएं राष्ट्रीय रंगमंच पर तेजी से उभरी। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान अकेले दिल्ली में 1,600 महिलाओं ने अपनी गिरफ्तारी दी।

इंदिरा प्रियदर्शिनी

बारह वर्ष की इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' ने बच्चों को लेकर एक '**चरखा संघ**' और '**वानर सेना**' का गठन किया था, जिसका उद्देश्य सविनय अवज्ञा आंदोलन में सक्रिय मदद करना और एक ठोस आधार के साथ उसे बढ़ावा देना था। इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' ने कृष्ण मेनन के नेतृत्व में इंडियन लीग में सक्रिय रूप से हिस्सा लिया। 1938 में इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' कांग्रेस की सदस्य बनी और स्वतंत्रता आंदोलन से सक्रिय रूप से जुड़ी रही। 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' को उनके पति के साथ गिरफ्तार करके नैनी जेल भेज दिया गया। इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' गाँवों में, विशेषकर महिलाओं से संपर्क स्थापित करने में बराबर सक्रिय रही। 1947 में इंदिरा 'प्रियदर्शिनी' ने दिल्ली के दंगा पीड़ित क्षेत्रों में गांधीजी के निर्देशों के अनुसार काम किया।

विजयलक्ष्मी पंडित

नेहरू परिवार की बेटी विजयलक्ष्मी पंडित भी गांधीजी से प्रभावित होकर जंग-ए-आजादी में कूद पड़ी। विजयलक्ष्मी एक पढ़ी-लिखी और प्रबुद्ध महिला थी और विदेशों में आयोजित विभिन्न सम्मेलनों में उन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया। 1936 में विजयलक्ष्मी उत्तर प्रदेश असेंबली के लिए चुनी गई और 1937 में भारत की पहली महिला कैबिनेट मंत्री बनी। विजयलक्ष्मी हर आंदोलन में आगे रहती, जेल जाती, रिहा होती और फिर आंदोलन में जुट जाती। 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ के सैन फ्रांसिस्को सम्मेलन में विजयलक्ष्मी ने भारत का प्रतिनिधित्व किया। विजयलक्ष्मी **स्वतंत्र भारत की पहली महिला राजदूत** थी, जिन्होंने मास्को, लंदन और वाशिंगटन में भारत का प्रतिनिधित्व किया।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में आदिवासी महिलाओं की भूमिका

1931-32 के कोल आंदोलन में आदिवासी महिलाओं ने सक्रिय भूमिका निभाई थी। बिरसा मुंडा के सहयोगी गया मुंडा की पत्नी '**माकी**' अपने बच्चे को गोद में लेकर फरसा-बलुआ से अंग्रेजों से अंत तक लड़ती रही थी। 1930-32 में मणिपुर में अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष का नेतृत्व नागा रानी गिडाल्यू ने किया। गिडाल्यू से भयभीत अंग्रेजों ने इनकी गिरफ्तारी पर पुरस्कार की घोषणा की और कर माफ करने का आश्वासन भी दिया था। अंततः गिडाल्यू पकड़ी गई और भारत के आजाद होने तक काल-

कोठरी में रही। 1935 के बाद महिलाएं विधान मंडलों के चुनाव में वोट देने तथा उम्मीदवारों के रूप में मैदान में उतरने लगी। अनेक महिलाएं 1937 में बनी लोकप्रिय कांग्रेसी सरकारों में मंत्री या संसदीय सचिव बनी और सैकड़ों महिलाएं स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं में सदस्य चुनी गईं। अब जेल जाने या गोली खानेवाली स्त्रियों को 'दासी' या 'गुड़िया' कहकर घरों में कैदकर बहलाया जाना संभव नही था।

भारत छोड़ो आंदोलन' में महिलाओं की भूमिका

'भारत छोड़ो आंदोलन' में महिलाओं ने भारतीय स्वतंत्रता के अनुशासित सिपाही की तरह अपनी भूमिका निभाई। गांधीजी ने पिछले अहिंसक आंदोलनों की तरह महिलाओं का नमक बनाने, विद्यालयों के बहिष्कार, विदेशी व शराब की दुकानों पर घरने देने का आह्वान किया। भारत छोड़ो आंदोलन में महिलाओं ने गरम व अहिंसक, दोनों तरीकों का प्रयोग किया।
गांधीजी ने 'करो व मरो' का नारा दिया और महिलाओं की विशेष भागीदारी पर जोर दिया। आंदोलन शुरू होते ही गांधी सहित तमाम कांग्रेसी नेताओं की गिरफ्तारी के बाद आंदोलन को चलाने की जिम्मेदारी महिलाओं ने स्वयं संभाल ली। महिलाओं ने व्यापक स्तर पर धरने-प्रदर्शन किये, हड़तालें की, सभाएं की और कानून तोड़े। इन महिलाओं में असम की कबकलता बरुआ, सुचेता कृपलानी, सरोजिनी नायडू, पद्मजा नायडू (सरोजिनी नायडू की पुत्री), ऊषा मेहता, अरुणा आसफ अली आदि प्रमुख थी।

ऊषा मेहता

ऊषा मेहता ने बंबई में **भूमिगत होकर रेडियो** की स्थापना की और जब सरकार ने सभी संचार माध्यमों पर रोक लगा दिया, तो उन्होने भूमिगत रहकर कांग्रेस रेडियो से प्रसारण किया। ऊषा मेहता की आवाज देशभक्ति व स्वतंत्राता की आवाज बन गई थी।

अरुणा आसफ अली

अरुणा आसफ अली और सुचेता कृपलानी ने अन्य आंदोलनकारियों के साथ भूमिगत होकर आंदोलन को आगे बढ़ाया। हरियाणा के एक रूढ़िवादी बंगाली परिवार में जन्मी अरुणा आसफ अली एक प्रबल राष्ट्रवादी और आंदोलनकर्मी महिला थी जिन्होंने परिवार और स्त्रीत्व के तमाम बंधनों को तोड़कर खुद को जंग-ए-आजादी को समर्पित कर दिया था। अरुणा आसफ अली के राजनीतिक संघर्ष की शुरुआत 1930 में 'नागरिक अवज्ञा आंदोलन' से हुई, जब उन्हें एक साल के लिए जेल जाना पड़ा था। 1941 में व्यक्तिगत सत्याग्रह के दौरान भी अरुणा आसफ अली को अपनी गतिविधियों के कारण जेल जाना पड़ा। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान 9 अगस्त, 1942 को अरुणा आसफ अली ने बंबई के ग्वालिया टैंक मैदान में राष्ट्रीय झंडा फहराकर आंदोलन की अगुवाई की। 1942 में अरुणा आसफ अली की सक्रिय भूमिका के कारण **'दैनिक ट्रिब्यून'** ने उन्हें '1942 की रानी झाँसी' नाम दिया। अरुणा आसफ अली ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की मासिक पत्रिका '**इंकलाब**' का भी संपादन किया। यद्यपि गांधीजी अरुणा आसफ अली के कार्य करने की पद्धति (क्रांतिकारी हिंसक गतिविधियों) से असंतुष्ट थे, लेकिन वह उनकी ईमानदारी, साहस व वीरता की बड़ी प्रशंसा करते थे। अरुणा आसफ अली के योगदान के कारण भारत सरकार ने 1998 में उन्हें 'भारत-रत्न' से सम्मानित किया है।

सुचेता कृपलानी

सुचेता कृपलानी ने भी राष्ट्रीय आंदोलन के हर चरण में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया और कई बार जेल गईं। 1946 में सुचेता कृपलानी को असेंबली का अध्यक्ष चुना गया। आजादी के बाद सुचेता कृपलानी 1958 से लेकर 1960 तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की जनरल सेक्रेटरी रहीं और 1963 में उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री और भारत की पहली महिला मुख्यमंत्री बनीं।

पद्मजा नायडू

पद्मजा नायडू भी अपनी माँ सरोजिनी की तरह राष्ट्रीय हितों के प्रति निष्ठावान् थी। 21 वर्ष की उम्र में पद्मजा नायडू राष्ट्रीय क्षितिज पर उभरी और हैदराबाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की संयुक्त संस्थापिका बन गईं। पद्मजा नायडू ने लोगों को खादी का प्रचार करते हुए विदेशी सामान के बहिष्कार करने की प्रेरणा दी। 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने के कारण पद्मजा नायडू को जेल जाना पड़ा। आजादी के बाद पद्मजा नायडू संसद की सदस्य बनी और बाद में पश्चिम बंगाल की राज्यपाल बनाई गईं। लगभग 50 वर्ष के सार्वजनिक जीवन में पद्मजा नायडू रेडक्रास से भी जुड़ी हुई थी।

कस्तूरबा गांधी

स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान महात्मा गाँधी को उनकी पत्नी कस्तूरबा गांधी ने भी अपना पूरा समर्थन दिया। कस्तूरबा गाँधी एक दृढ़ आत्म-शक्तिवाली महिला थी और गांधीजी की प्रेरणा भी थी। कस्तूरबा गांधी ने न केवल हर कदम पर अपने पति का साथ दिया, बल्कि कई बार स्वतंत्र रूप से और गांधीजी के मना करने के बावजूद जेल जाने और संघर्ष करने का निर्णय लिया। 'भारत छोड़ो आंदोलन' प्रस्ताव पारित होने के बाद जब गांधीजी आगा खाँ पैलेस (पूना) में कैद कर लिये गये, तो कस्तूरबा उनके साथ जेल गईं। डा. सुशीला नैयर, जो कि गांधीजी की निजी डाक्टर थीं, भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान 1942-44 तक उनके साथ जेल में रहीं। 1942 के अन्दोलन के दौरान ही दिल्ली में 'गर्ल गाइड' की 24 लड़कियां अपनी पोशाक पर विदेशी चिन्ह धारण करने और यूनियन जैक फहराने से इनकार करने के कारण अंग्रेजी हुकूमत द्वारा गिरफ्तार हुईं। इसी आंदोलन के दौरान तामलुक की 73 वर्षीय विधवा मातंगिनी हाजरा ने गोली लगने के बावजूद राष्ट्रीय ध्वज को अंत तक ऊँचा उठाये रखा। इस आंदोलन की महत्त्वपूर्ण विशेषता ग्रामीण स्त्रियों की व्यापक सहभागिता थी। 1930 में दांडी में पुरुषों के बाद महिलाओं ने अपनी भूमिका निभाई, किंतु 1942 के आंदोलन में महिलाओं ने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष किया।

क्रांतिकारी गतिविधियों महिलाओं की भूमिका

एक ओर गांधीजी के नेतृत्व में अनेक देशभक्त महिलाएं राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल हो रही थी, वही दूसरी ओर देश के प्रायः सभी हिस्सों में क्रांतिकारी गतिविधियों में महिलाएं महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही थी। महिला क्रांतिकारी श्रीमती ननीबाला देवी **'युगांतर पार्टी'** की सदस्य थी, जो क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए जानी जाती थी।

क्रांतिकारी आंदोलन के दौरान महिलाएं हथियारों को छुपाकर रखती थी, क्रांतिकारियों को शरण देती थी और उन्हें प्रोत्साहित करती थी। महिलाओं की यह घरेलू भूमिका क्रांतिकारी गतिविधियों को संरक्षण प्रदान करती थी।

सुशीला दीदी

काकोरी कांड के कैदियों के मुकदमे की पैरवी के लिए सुशीला दीदी ने अपनी स्वर्गीय माँ द्वारा विवाह के लिए रखे गये 10 तोला सोने को दान कर दिये थे। क्रांतिकारियों की पैरवी करने के लिए सुशीला दीदी ने '**मेवाड़पति**' नामक नाटक खेलकर चंद्रा इकट्ठा किया था। 1930 के सविनय अविज्ञा आंदोलन में सुशीला दीदी ने '**इंदुमति**' के छद्म नाम से भाग लिया और गिरफ्तार भी हुईं।

दुर्गा भाभी

'दि फिलासफी आफ बम' के लेखक **भगवतीचरण बोहरा** की पत्नी **दुर्गादेवी बोहरा** क्रांतिकारियों के बीच में 'दुर्गा भाभी' नाम से जानी जाती थी। **दुर्गा भाभी ने 1927** में लाला लाजपतराय की मौत का बदला लेने के लिए लाहौर में बुलाई गई बैठक की अध्यक्षता की थी। 1928 में सांडर्स की हत्या के बाद भगतसिंह और राजगुरु को दुर्गा भाभी जिस प्रकार पुलिस की आँखों में धूल झोंकर लाहौर से कलकत्ता पहुँचाया, वह आजादी के इतिहास का अनछुआ पृष्ठ है। यही नही, बंबई के तत्कालीन **गर्वनर हेली** को

मारने के लिए दुर्गा भाभी ने ही गोली चलाई थी, जिसमें **टेलर** नामक एक अंग्रेज घायल हो गया था। बंबई कांड में **दुर्गा भाभी** के विरुद्ध वारंट जारी हुआ और दो वर्ष से ज्यादा समय तक फरार रहने के बाद 12 सितंबर, 1931 को लाहौर में गिरफ्तार कर ली गई।

लतिका घोष

ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष में महिला क्रांतिकारिता का पहला प्रत्यक्ष उदाहरण 1928 में मिला, जब सुभाषचंद्र बोस के कहने पर **लतिका घोष ने महिला राष्ट्रीय संघ** शुरू किया। कलकत्ता में हो रहे कांग्रेस अधिवेशन में बोस ने कर्नल लतिका घोष के नेतृत्व में '**वोमेन वालंटियर काप्स**' का संगठन किया, जिसमें 128 महिला स्वयंसेवकों ने सैनिक वर्दी में परेड की।

चटगाँव आर्मरी रेड में महिलाओं की भूमिका

अप्रैल, 1930 में बंगाल में सूर्यसेन के नेतृत्व में हुए 'चटगाँव आर्मरी रेड' में पहली बार युवा महिला क्रांतिकारियों ने सशस्त्र क्रांतिकारी आंदोलन में स्वयं भाग लिया। क्रांतिकारी महिलाएं क्रांतिकारियों को शरण देने, संदेश पहुँचाने और हथियारों की रक्षा करने से लेकर बंदूकें चलाने तक में प्रवीण थी। क्रांतिकारी महिलाओं में से एक **प्रीतीलता वाडेकर** ने एक यूरोपीय क्लब पर हमला किया और कैद से बचने के लिए आत्महत्या कर ली। **कल्पनादत्त** को सूर्यसेन के साथ ही गिरफ्तार कर 1933 में आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। दिसंबर, 1931 में फैजुनिसा गर्ल्स स्कूल की दो छात्राओं- शांति घोष और सुनीति चौधरी ने कौमिल्ला के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट स्टीवेंस की दिनदहाड़े गोली मारकर हत्या कर दी। 6 फरवरी, 1932 को **बीनादास** ने कलकत्ता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में उपाधि ग्रहण करने के समय बंगाल के गवर्नर पर नजदीक से गोली चला कर अंग्रेजी सत्ता को चुनौती दी। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये क्रांतिकारी महिलाएं 1928 में हुए कांग्रेस अधिवेशन की परेड में शामिल थी, जो **कर्नल लतिका** घोष व सुभाषचंद्र बोस ने तैयार की थी। **सुहासिनी अली तथा रेणुसेन** ने भी अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों से 1930-34 के मध्य बंगाल में धूम मचा दी थी।

आजाद हिंद फौज में महिलाओं की भूमिका

सुभाषचंद्र बोस ने दक्षिण-पूर्व एशिया में प्रवासी भारतीयों की इंडियन नेशनल आर्मी का गठन किया था। **कैप्टन डा. लक्ष्मी सहगल** आजाद हिंद सरकार में महिला विभाग की मंत्री और आजाद हिंद फौज की रानी झाँसी रेजीमेंट की कमांडिंग आफिसर रही। बोस के आह्वान पर डा. लक्ष्मी सहगल ने सरकारी डाक्टर की नौकरी छोड़ दी थी। कैप्टन सहगल के साथ मानवती आर्या भी आजाद हिंद फौज की रानी झांसी रेजीमेंट में लेफ्टिनेंट रही। रानी झांसी रेजीमेंट की महिलाओं का प्रशिक्षण भी पुरुषों रेजीमेंट के समान ही होता था और उन्हें पुरुष सैनिकों के समान ही वर्दी पहनना पड़ता था। आजाद हिंद फौज की महिलाओं की वीरता की कहानी ने भारत की दूसरी महिलाओं को मनोवैज्ञानिक रूप से बहुत प्रभावित किया।

किसान एवं वामपंथी आंदोलनों में महिलाओं की भूमिका

किसान और वामपंथी आंदोलनों के दौरान भी स्त्रियां पहली पंक्ति में दिखाई पड़ी। 1912-14 में बिहार में **जतरा भगत** ने जनजातियों को लेकर ताना आंदोलन चलाया। जतरा की गिरफ्तारी के बाद उसी गाँव की महिला **देवमनियां** उरांइन ने आंदोलन की बागडोर संभाली थी। कम्युनिस्ट आंदोलन, सामंतवाद-विरोधी आंदोलनों में भी अनेक महिलाएं शामिल हुई थी। 1930 के दशक के उत्तरार्ध में **ऊषाबाई डांगे** जैसी कम्युनिस्ट महिलाओं ने मुंबई में सूती मिलों में काम करनेवाली श्रमिक महिलाओं को संगठित किया। 1939 में पहली बार राजनीतिक बंदियों की रिहाई के लिए देशव्यापी अभियान में कम्युनिस्ट और राष्ट्रवादी महिलाओं ने एक साथ काम किया। 1940 तक वामपंथी **आल इंडिया स्टूडेंट्स फेडरेशन** बन चुका था जिसमें अनेक छात्राएं शामिल थी। 1941 में दिल्ली में लगभग 20,000 छात्राओं ने जुलुस निकाला, जिनमें कई वामपंथी महिलाएं भी थी। राष्ट्रवादी आंदोलन में छात्राओं की सहभागिता बढ़ने के कारण आल इंडिया स्टूडेंट्स फेडरेशन ने छात्राओं की एक अलग समिति बनाई, जिसमें 1941 तक 50,000 से अधिक छात्राएं शामिल हो चुकी थी। 1942 में बंगाल की कुछ वामपंथी नेत्रियों ने एक महिला आत्मरक्षा समिति

का गठन किया था। महिला आत्मरक्षा समिति की महिलाओं ने 1943 में बंगाल में पड़े अकाल में अनेक राहत कार्य किये। धीरे-धीरे महिला आत्मरक्षा समिति की सदस्य संख्या बढती गई और इसमें शहरी व ग्रामीण सभी स्तर की महिलाएं शामिल होती गईं।

1946 में सामंती उत्पीड़न के खिलाफ चलाये गये तेभागा व तेलंगाना आंदोलन में महिलाओं ने ऐतिहासिक भागीदारी निभाई। तेभागा आंदोलन में किसान महिलाओं ने **'नारी-वाहिनी'** दल बनाकर उपलब्ध हथियारों के बल पर औपनिवेशिक राज्य से लोहा लिया। तेलंगाना संघर्ष में हैदराबाद के निजाम के सामंती दमन के खिलाफ बेहतर मजदूरी, सही लगान जैसे मुद्दों को लेकर महिलाओं ने पुरुषों के समान संघर्ष किया। इसी तरह 1946 में जमीनी संपति व निजी अधिकारों के साथ केरल की वामपंथी महिलाओं ने पुरुषों के साथ त्रावनकोर की सत्ता के विरुद्ध आंदोलन किया और सामंती ताकतों को हराया।

वर्ली आदिवासियों के लिए वामपंथी नेत्री **गोदावरी पार्स्लेकर** ने संघर्ष किया। कपड़ा मजदूरों के समर्थन में कम्युनिस्ट **ऊषाताई डांगे व पार्वती भोरे** ने सक्रिय भूमिका निभाई। कम्युनिस्ट महिलाओं ने संपति-संबंधी अधिकार, व्यैक्तिक अधिकार और कानूनी अधिकार जैसे जरुरी बदलावों की जोरदार ढंग से माँग की। किंतु इन महिलाओं ने शायद ही पितृसत्ता जैसी गंभीर समस्या का विरोध किया था। कम्युनिस्ट नेता ही कम्युनिस्ट महिलाओं को बराबर का दर्जा नही देते थे और महिलाओं को सिर्फ सहायक व द्वितीय दर्जे की भूमिका निभाने का जिम्मा दिया जाता था। सक्रिय भूमिका निभानेवाली महिलाएं भी आंदोलन के समाप्त होते-होते पितृसत्तात्मक संरचना में वापस लौट जाती थी। **मल्लू स्वराज्यम्** जैसी एक स्त्री, जो 'तेलंगाना की मशहूर वीरांगना' थी, आंदोलन की वापसी के कुछ साल बाद क्या कर रही थी? उसके पति के शब्दों में, 'पका रही है और खा रही है और क्या?' कम्युनिस्ट नेतृत्व भी स्त्रियों को उसी सीमा में अंदर रखना चाहता था, जिसमें वह परंपरागत रूप से रहती रही थी अर्थात् समानतावादी समाज का जो सपना क्रांतिकारी महिलाओं ने देखा था, वह पूरा नही हुआ।

महिला संगठनों में महिलाओं की भूमिका

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान महिला संगठनों ने महिला-उत्थान के साथ-साथ भारतीय राष्ट्र के निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। 19वी सदी के सभी संगठन प्रायः पुरुष सुधारकों द्वारा ही स्थापित किये गये थे, जो घर की चहारदीवारी को ही महिलाओं के प्राथमिक और मौलिक गतिविधियों का क्षेत्र मानते थे। किंतु कुछ उदारपंथी सुधारक महिलाओं के राष्ट्र-निर्माण के कार्य में सीमित रूप से भाग लेने के पक्षधर थे। दूसरे शब्दों में, पितृसत्ता की पकड़ में बहुत मामली-सी ढील दी गई थी। महिलाओं की स्वतंत्र पहचान के लिए सरलादेवी चौधरानी ने 1901 में नेशनल सोशल कांफ्रेंस के अंतर्गत भारत स्त्री महामंडल की स्थापना की। भारत स्त्री महामंडल संभवतः पहला महिला संगठन था, जिसकी स्थापना एक महिला द्वारा की गई थी। 1917 में एनी बेसेंट, मारग्रेट कौसिंस आदि ने मद्रास में **'भारतीय महिला संघ'** की स्थापना की। 1917 में ही सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में महिलाओं के एक प्रतिनिधिमंडल ने पुरुषों के समान महिलाओं के लिए मताधिकार और शिक्षा की सुविधाओं की माँग की जिसे 1919 के अधिनियम में आंशिक रूप से पूरा भी किया गया। इस प्रकार विभिन्न प्रांतों की विधानसभा चुनावों में महिलाओं को मत देने का अधिकार मिला और धीरे-धीरे यह भी मान लिया गया कि महिलाएं विधान परिषद् की सदस्य भी बन सकती है। 1920 के बाद आत्मचेतन और आत्मविश्वास प्राप्त स्त्रियों ने स्वयं अनेक संस्थाओं और संगठनों को खड़ा किया।

1925 में लेडी मेहरीबाई टाटा की पहल पर 'नेशनल कौंसिल आफ इंडिया' और 1927 में 'अखिल भारतीय महिला संघ' (All India Women's Conference) की स्थापना की गई। चूंकि इन संगठनों के अधिकतर सदस्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भी सदस्य थे, इसलिए मताधिकार विस्तार, राजनीतिक गरमवाद तथा उपनिवेशवाद-विरोध जैसे मुद्दों को समय-समय पर कांग्रेस ने भी अपने प्रस्तावों में शामिल किया। 1927 में अखिल भारतीय महिला शिक्षा सम्मेलन का आयोजन पुणे में हुआ।
1929 में मोहम्मद अली जिन्ना के प्रयासों से बाल-विवाह निषेध अधिनियम पारित किया गया, जिसके अनुसार एक लड़की के लिए शादी की न्यूनतम् उम्र 14 वर्ष निर्धारित कर दी गई। 1931 में कराची में महिला-अधिकार को कांग्रेस ने जनता के मौलिक

अधिकारवाले प्रस्ताव में शामिल किया। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में राधाबाई सुब्बारायण तथा बेगम शाहनवाज खान ने महिला प्रतिनिधियों के रूप में भाग लिया।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में आठ सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल ने सार्वजनिक वयस्क तथा मिश्रित सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों की माँग की थी। 1935 के भारत सरकार अधिनियम में मतदाता स्त्रियों का अनुपात बढ़ाकर 1/5 कर दिया गया और महिलाओं के लिए कुछ सीटे भी आरक्षित की, किंतु कांग्रेस और महिला संगठनों ने इसे अस्वीकार कर दिया और सार्वजनिक वयस्क मताधिकार की माँग की। महिला संगठनों ने 'विस्तारित महिला क्षेत्र' का निर्माण किया। ऐसी परिस्थिति में राष्ट्रवादी भी महिला-प्रश्नों को गंभीरता से लेने लगे थे, क्योंकि राष्ट्र-निर्माण के कार्य में उन्हें महिलाओं की भागीदारी की अत्यंत आवश्यकता थी। महिला संगठनों ने क्रांतिकारी व नारीवादी विचारधारा को नही अपनाया, क्योंकि ये संगठन स्वयं पुरुषों के समर्थन और पुरुष-प्रभुत्ववादी राष्ट्रीय दलों के भाग के रूप में कार्य करते थे।

महिला संगठनों के शीर्ष नेतृत्व पर प्रायः यह आरोप लगया जाता रहा है कि इन संगठनों की अध्यक्षता समृद्ध परिवारों की महारानियां करती थी और गरीब, दलित व पिछड़े वर्ग की महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व नही दिया जाता था। भारत की संविधान सभा में सुचेता कृपलानी, दुर्गाबाई देशमुख, रेणुका राय, हंसा मेहता जैसी महिलाएं भी चुनी गईं। महिला सदस्यों ने संविधान सभा में संविधान-निर्माण के समय महिला-उद्धार के लिए आवाज उठाई और लैंगिक समानता को संविधान में जगह दिलाने का प्रयास किया। परिणामतः स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् भारत में महिलाओं को सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार प्राप्त हुआ।

राष्ट्रीय आंदोलन में विदेशी महिलाओं की भूमिका

भारतीय संस्कृति से प्रभावित होकर अनेक विदेशी महिलाओं ने भी भारत के राष्ट्रीय आंदोलन में अपने प्राणों को दाँव पर लगाया। इन विदेशी महिलाओं में एनी बेसेंट, मैडम भीकाजी कामा, सिस्टर निवेदिता, मैडलिन स्लेड (मीराबेन) आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

एनी बेसेंट

लंदन में जन्मी एनी बेसेंट थिओसोफिकल सोसायटी से जुड़ने के बाद भारत आई थीं। एनी बेसेंट थिओसोफिकल सोसाइटी की अध्यक्ष थीं। एनी बेसेंट 1917 में भारतीय महिला संघ की पहली अध्यक्ष बनीं, जो मूलतः महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों के लिए माँगों को आगे बढ़ाने का कार्य करता था। भारतीय सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित बेसेंट ने 1898 में बनारस में सेंट्रल हिंदू कालेज की नीव रखी, जो 1916 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के रूप में विकसित किया गया। एनी बेसेंट ने **'न्यू इंडिया'** और '**कामनवील**' पत्रों का संपादन करते हुए आयरलैंड के 'स्वराज्य लीग' की तर्ज पर सितंबर, 1916 में '**भारतीय होमरूल लीग**' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य स्वशासन प्राप्त करना था। होमरुल आंदोलन के दौरान एनी बेसेंट की गिरफ्तारी के विरोध में देश के कोने-कोने में प्रदर्शन और सभाएं हुईं। अपनी लोकप्रियता के कारण 1917 में एनी बेसेंट भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित हो गईं। एनी बेसेंट को 1917 में कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष होने का गौरव भी प्राप्त है।

मारग्रेट नोबुल

आयरलैंड की मूलनिवासी मारग्रेट नोबुल (भगिनी निवेदिता) विवेकानंद के उदात्त दृष्टिकोण और स्नेहाकर्षण से प्रभावित होकर भारत को अपनी कर्मभूमि मान लिया था। भारत आकर भगिनी निवेदिता ने स्त्रियों की शिक्षा और उनके बौद्धिक उत्थान के लिए प्रयास किया तथा भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में अपनी सक्रियता दिखाई। भगिनी निवेदिता ने अकाल और महामारी के दौरान पूरी निष्ठा से भारतीयों की सेवा की। कलकत्ता विश्वविद्यालय में 11 फरवरी, 1905 को आयोजित दीक्षांत समारोह में जब

वायसराय लार्ड कर्जन के भारतीय युवकों के प्रति अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया, तो भगिनी निवेदिता ने बड़ी निर्भीकता से उसका प्रतिकार किया था।

मैडम भीकाजी कामा

भारतीय मूल की फ्रांसीसी नागरिक मैडम भीकाजी कामा ने लंदन, जर्मनी और अमेरिका में जाकर भारत की स्वतंत्रता की पुरजोर वकालत की। मैडम कामा का पेरिस से प्रकाशित '**वंदेमातरम्**' पत्र प्रवासी भारतीयों में बहुत लोकप्रिय था। जर्मनी के स्टुटगार्ट शहर में 22 अगस्त, 1907 में हुई सातवी अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस में '**वंदेमातरम्**' अंकित भारतीय तिरंगा फहराने का श्रेय मैडम को ही प्राप्त है।

मैडेलिन स्लेड

इंग्लैंड के ब्रिटिश नौसेना के एडमिरल की पुत्री मैडेलिन स्लेड ने, जिन्हें गांधीजी ने मीराबेन का नाम दिया था, भी भारत को अपनी कर्मभूमि बनाया था। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान मीराबेन गांधीजी के साथ आगा खाँ महल में कैद रही। यद्यपि मीराबेन ने भारत की धरती पर जन्म नही लिया था, किंतु वह सच्चे अर्थो में भारतीय थी। गांधीजी का अपनी इस विदेशी पुत्री पर विशेष अनुराग था।

म्यूरियल लिस्टर

मीराबेन के साथ-साथ ब्रिटिश महिला म्यूरियल लिस्टर भी गांधीजी से प्रभावित होकर भारत आई थी। म्यूरियल लिस्टर ने इंग्लैंड में भारत की स्वतंत्रता का समर्थन किया। द्वितीय गोलमेज सम्मेलन के दौरान गांधीजी इंग्लैंड में म्यूरियल लिस्टर के '**किंग्सवे हाल**' में ही ठहरे हुए थे। उस दौरान म्यूरियल लिस्टर ने गांधीजी के सम्मान में एक भव्य समारोह भी आयोजित किया था।

नेली सेनगुप्ता

इंग्लैंड में जन्मी नेली सेनगुप्ता को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए जाना जाता है। जब चटगाँव (बंगाल) के निवासी जतीद्रमोहन सेनगुप्ता पढ़ने के लिए इंग्लैंड गये, तो वही वर्ष 1909 में नेली से उनका विवाह हो गया। जतीद्र के भारत आने पर नेली भी उनके साथ भारत आ गई। 1921 में असहयोग आंदोलन में अपने पति जतीद्रमोहन सेनगुप्ता के साथ नेली भी सुख-सुविधा का जीवन त्यागकर भारत के स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ी। असम-बंगाल की रेल हड़ताल के सिलसिले में जब जतीद्रमोहन गिरफ्तार कर लिये गये तो नेली ने मोर्चा संभाला और प्रतिबंधित खादी बेचने के आरोप जेल गई। जब 1933 में कोलकाता अधिवेशन के लिए निर्वाचित अध्यक्ष मालवीय गिरफ्तार कर लिये गये, तो नेली को ही कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया था। कोलकाता के कांग्रेस अधिवेशन में अध्यक्ष पद से भाषण देने पर नेली को भी गिरफ्तार कर लिया गया था। नेली सेनगुप्ता वर्ष 1940 और 1946 में निर्विरोध बंगाल असेंबली की सदस्य चुनी गई। 1947 के बाद नेली सेनगुप्ता पूर्वी बंगाल में ही रही और 1954 में पूर्वी पाकिस्तान असेंबली की निर्विरोध सदस्य बनी। भारत की आजादी में योगदान देनेवाली नेली सेनगुप्ता की मृत्यु 23 अक्टूबर, 1973 को कोलकाता में हुई।

राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भूमिका का मूल्यांकन

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं ने देशभक्ति व विदेशी शासन से मुक्ति के भाव से ओतप्रोत होकर राष्ट्र के प्रति अपने कत्र्तव्यों का निर्वाह किया और घरेलू व सार्वजनिक जीवन की जिम्मेवारियों को एक साथ निभाया। किंतु भारत के स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं की भूमिका कई अर्थो में विरोधाभासी थी। महिलाओं के अधिकारों और राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भागीदारी में कोई सीधा संबंध नही था। अपने देश व मातृभूमि से अत्यंत प्रेम करने के कारण स्त्रियां स्त्री-मुक्ति को विशेष प्रमुखता न देकर राजनीतिक मुक्ति के लिए संघर्ष करती रही। जहाँ गांधी जैसे नेताओं ने महिलाओं को घरों से बाहर निकलकर

राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल होने का आह्वान किया, वही आंदोलनों के दौरान उनकी भूमिका का निर्धारण सांस्कृतिक और पितृसत्तात्मक सीमाओं के अंदर ही किया गया। दरअसल महिलाओं से 'स्त्रियोचित व्यवहार' की ही अपेक्षा की जाती थी। फिर भी, स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भारत की महिलाओं ने पहली बार समानता और स्वतंत्रता के मूल्यों को जाना और समझा। सरलादेवी चौधरानी, सरोजिनी नायडू, सुचेता कृपलानी जैसी महिलाओं ने राजनीतिक-मुक्ति के साथ-साथ मताधिकार, समान अधिकार, चुनावी राजनीति में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका के लिए भी संघर्ष किया।

किंतु राष्ट्रीय आंदोलन और इसके नेताओं ने कभी लैंगिक समानता जैसे मुद्दे नही उठाये और न ही पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था को चुनौती दी। राष्ट्रवादी नेताओं ने परिवार के भीतर होनेवाले स्त्रियों के उत्पीड़न पर भी ध्यान नही दिया। 1947 में भारत को राजनीतिक मुक्ति तो मिल गई, किंतु कुछ राष्ट्रवादियों की पुरुषवादी मानसिकता के कारण महिला-उद्धार के प्रश्नों को अपेक्षित महत्त्व नही मिल सका। राष्ट्रीय आंदोलन के विभिन्न चरणों में स्वयं महिलाओं ने भी पितृसत्ता को चुनौती नही दी। यद्यपि पंडिता रमाबाई जैसी कुछेक महिलाओं ने ब्राह्मणवादी पितृसत्ता पर गहरे आघात किये, किंतु उनका प्रयास सफल नही हो सका। राष्ट्रवादी अभिजन वर्ग ने महिलाओं को सीमित सीमाओं में रहकर सार्वजनिक गतिविधियों में भाग लेने की छूट दी, किंतु पितृसत्ता की पकड़ कभी कमजोर नही होने दी।

गांधीजी ने स्वयं महिलाओं के लिए घरेलू क्षेत्र को ही सर्वोच्च बताया था, तथापि गांधीवादी आंदोलनों में महिलाओं की सार्वजनिक भागीदारी प्रशंसनीय रही। महिलाएं पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर भारतीय स्वतंत्रता के सपने को अपनी आँख में संजोये आगे बढ़ रही थी। क्रांतिकारी व कम्युनिस्ट आंदोलनों में भी छात्राओं व महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी, किंतु यहाँ भी पितृसत्ता का थोड़ा कम, किंतु स्पष्ट प्रभाव था। महिला संगठनों ने महिला मताधिकार पर तो विशेष जोर दिया, लेकिन पितृसत्ता की संरचना पर कोई प्रभावशाली प्रहार नही किया। इस प्रकार महिलाओं ने पितृसत्ता की जकड़न के बावजूद राष्ट्रीय आंदोलन में अपनी हिस्सेदारी का निर्वाह किया।